द्वितीय अध्याय

हिमाचल प्रदेश के विभिन्न जनपदों की लोक संस्कृति का निरूपण

1. लोक संस्कृति की व्याख्या
2. लोकगीतों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
3. लोकगीतों का वर्गीकरण
4. हिमाचल प्रदेश का लोक संगीत

द्वितीय अध्याय

हिमाचल प्रदेश के विभिन्न जनपदों की लोक संस्कृति का निरूपण

हिमाचल प्रदेश एक विस्तृत भूखण्ड है तथा बारह जिलों में बंटा हुआ है। इन सभी जिलों की भाषा अथवा बोली लोकसाहित्य, लोकसंस्कृति तथा लोकसंगीत में विभिन्नताएं दृष्टिगोचर होती है। जहां एक तरफ मैदानी भू–भाग हैं जैसे– कांगड़ा, बिलासपुर, हमीरपुर, ऊना, सोलन वहीं दूसरी तरफ पर्वतीय खण्ड जैसेः– शिमला, चम्बा, कुल्लु, मण्ड़ी, सिरमौर, किन्नौर व लाहौल–स्पिति हैं, जहां रहने वाले सभी लोगों की अपनी स्थानीय परम्पराएं गीत–संगीत एवं भाषा आदि हैं। जहां लोकगीत, लोक वाद्यों तथा लोकनृत्यों में स्थानीय प्रभाव की प्रबलता है और जनजातीय क्षेत्रों में प्रयुक्त लोकसंगीत की अपनी विशेषतांएं हैं।[1]

इस अध्याय में सर्वप्रथम 'लोक' शब्द को स्पष्ट किया जा रहा है। लोक शब्द संस्कृत के लोकदर्शन धातु में 'घञ' प्रत्यय लगाकर बना है, जिसका अर्थ है देखने वाला।[2]

'लोक' शब्द की व्याख्या :

"लोक" शब्द नया नहीं अपितु इसका अर्थ आम जनता है तथा यह प्राचीन समय से हमारे साहित्य में प्रयोग होता आया है। इस शब्द की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों में मतभेद पाए जाते हैं। इस शब्द का प्रयोग हमारे वेदों जैसे 'ऋगवेद' व 'अर्थववेद' में दो रूपों अर्थात् 'दिव्य' तथा 'पार्थिव' इत्यादि अर्थ लेकर किया गया है। वेदों, उपनिषदों, भरतमुनि के नाट्यशास्त्र, पाणिनी की अष्टाध्यायी, महर्षि व्यास की 'शतसहस्त्री सहिंता' आदि में 'लोक' शब्द का प्रयोग मिलता है।

---

1 हिमाचल प्रदेश का लोक संगीत लेखक – के० एल० सहगल पृ० सं०, 139.

2 सोमसी –हिमाचल प्रदेश गाथा गीतों में संगीतात्मक शैलियां लेख – डॉ० इन्द्राणी चक्रवती पृ० सं०, 12.

ऋगवेद में प्रयुक्त 'देही लोकम' के अनुसार 'लोक' शब्द का प्रयोग मिलता है। भरतमुनि के 'नाट्यशास्त्र' के चौदहवें अध्याय में अनेक नाट्यधर्मी तथा लोकधर्मी प्रवृतियों का उल्लेख किया है। महर्षि व्यास ने अपनी 'शतसहस्त्री सहिंता' की विशेषताओं का वर्णन करते हुए लिखा है कि 'महाभारत ग्रंथ अज्ञान रूपी अंधकार से अंधे होकर व्यथत लोक साधारण जनता की आंखों को ज्ञान रूपी अंजन की श्लाका लगाकर खोल देता है।'[1]

'डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी' 'लोक' शब्द की व्याख्या करते हुए लिखते हैं – 'लोक' शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं, बल्कि नगरों और गांवों में फैली हुई वह समूची जनता है जिसके व्यवहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नहीं है। यह लोक नगर में परिष्कृत, रूचिसम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा ज्यादा सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं व परिष्कृत रूची वाले लोगों की समूची विलासता व सुकुमारिता को जिंदा रखने के लिए जो उपयुक्त वस्तुऐं जरूरी हैं, उन को उत्पन्न करते हैं। यह 'लोक' शब्द की व्याख्या है।[2]

पाश्चात्य भाषा में 'लोक' को 'फोक' कहा गया है।[3] **'एनसाइकलोपिडिया ब्रिटेनिक'** में 'लोक' शब्द की व्याख्या इस प्रकार की गई है– 'एक आदिम जाति में वे सभी व्यक्ति फोक अर्थात् लोक होते हैं, जिनसे वह सम्प्रदाय बना है और शब्द का विशद्तम अर्थ लिया जाये तो इसका प्रयोग सभ्य राष्ट्र की सारी जनसंख्या के लिए भी किया जा सकता है, किन्तु लोकसंस्कृति लोकसंगीत आदि से सम्बन्धित' संकुचित अर्थ में प्रमुखतः उन्हीं के लिए आता है,

---

1 हिन्दी साहित्य का वृहस्थ इतिहास द्वारा कुल्लुई लोक साहित्य, पदमचंद्र कश्यप पृ० सं०, 2.

2 हिमाचली लोकगीतों में राग छाया – कल्पना शर्मा पी० एच० डी० थिसिस पृ० सं०, 60.

3 हिमाचली लोकगीतों में रागछाया (एक अध्ययन) कल्पना शर्मा पृ० सं०, 61.

जो नगर संस्कृति की धाराओं तथा विधिवत् शिक्षा से बाहर पड़ जाते हैं, जो निरक्षर अथवा कम पढ़े–लिखे हैं और गांवों अथवा जनपदों में निवास करते हैं।[1]

'डॉ० वासुदेव अग्रवाल के अनुसार' लोक शब्द का उल्लेख इन शब्दों में किया है– 'लोक हमारे जीवन का महासमुद्र है। उसमें भूत, वर्तमान और भविष्य सब कुछ संचित रहता है। लोक कृत्सन ज्ञान और सम्पूर्ण अध्ययन में अब शास्त्रों का पर्यवसान है। अर्वाचीन मानव के लिए लोक सर्वोच्च प्रजापति है। इसका कल्याण हमारी मुक्ति का द्वार और निर्माण का नवीन रूप है। लोक पृथ्वी, मानव इसी त्रिलोकी में जीवन का कल्याणतम् रूप है।'[2]

इसी प्रकार 'लोक' शब्द के बारे में विभिन्न विद्वानों के विभिन्न मत पाये गये हैं। अतः 'लोक' शब्द को स्पष्ट करते हुए हम कह सकते हैं कि नगरों के पढ़े–लिखे आधुनिक तरीकों से रहने वाले लोगों से दूर संस्कृत लोगों के प्रभाव से अछूते लोग जो स्वभाव से सरल और निर्मल हैं, जिनके जीवन में अभी भांति और प्रेम के मूल्य हैं, वैसा जन–साधारण ही लोक है।[3]

वास्तविक अर्थ में 'लोक' शब्द साधारण समाज में पृथ्वी पर रह रही वह जनता है, जिसमें पूर्व संचित परम्पराएं, विश्वास, भावनाएं, आर्दश सुरक्षित हैं और भाषा साहित्यगत् सामग्री ही नहीं, बल्कि इसमें अनेक विषयों के अनगढ़ किन्तु ठोस रत्न छिपे हुए हैं। अतः 'लोक' शब्द अत्यन्त सम्मान सूचक बन गया है।

'संस्कृति शब्द की व्याख्या' :

संस्कृति राष्ट्र की आत्मा है, उसकी जीवनवाहिनी है। यह वह दिव्य ज्योति है, जो भूत के अनुभवी ज्ञान से वर्तमान के उपयोगी अध्ययन और भविष्य के विकासशील अनुशीलन का पथ प्रदर्शन करती है। 'सम' उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु से

---

1 बिलासपुर तथा कुल्लु के पारम्परिक लोकवाद्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन जयराम शर्मा लघुशोध प्रबन्ध पृ० सं०, 3.

2 मण्डयाली लोकगीत और लोकगाथाएं डॉ० कांशीराम आत्रेय पृ० सं०, 23.

3 हिमाचली लोकगीतों में रागछाया (एक अध्ययन) कल्पना शर्मा पृ० सं०, 61.

भूषण अर्थ में सुट् का आगम करके 'क्तिन' प्रत्यय करने से व्युत्पन्न 'संस्कृति' शब्द का व्यवहारिक अर्थ 'भूषण भूत समयक्–कृति' है।[1]

मनुष्य स्वभाव से कर्मशील और संघर्षरत् रहा है। इस तरह उसके सतत् कर्मों का सुसंस्कृत रूप संस्कृति है। संस्कृति का मूलाधार आचार–विचार, रहन–सहन, बोल–चाल, मनन, चिन्तन से मानदण्ड़ों का सृजन करना है।

संस्कृति के प्रमुख अंग समाज के रीति–रिवाज़ दर्शन–धर्म, साहित्य–इतिहास, ज्ञान–विज्ञान, कला–भाषा, शिक्षा–दीक्षा, प्रथाएं, परम्पराएं आदि हैं। वस्तुतः संस्कृति में राष्ट्र या समाज की पूर्ण जीवन पद्धति सन्निहित है।

कुछ लोग संस्कृति को धर्म का परिष्कृत रूप मानते हैं, परन्तु यहां धर्म से अभिप्राय हिन्दु, मुस्लिम, सिख, इसाई आदि धर्म विशेष से नहीं है। यदि संस्कृति का किसी धर्म विशेष से सम्बन्ध हो तो उससे सम की भावना लुप्त हो जाती है। 'सम से युक्त कृति' ही वस्तुतः संस्कृति है। सन्निकटता, स्निग्धता, समानता, सम्पूर्णता और सयंमकता की भावना संस्कृति की विशिष्टता है। संस्कृति अनुभवजन्य ज्ञान है, जो सतत् तथा नित्य रहता है। अतः एक स्थान से दूसरे स्थान देश की प्रकृति में परिनिष्ठित संस्कारों का दूसरी परिस्थितियों और प्रवृतियों में जनित संस्कारों से भिन्न होना स्वभाविक है। इसलिए प्रत्येक राष्ट्र की संस्कृति दूसरे राष्ट्र की संस्कृति से भिन्न विशिष्टताऐं अपनाती हुई प्रदर्शित होती हैं। प्राकृतिक विधानों के अनुरूप संस्कार की हुई पद्धति ही वास्तविक संस्कृति है।[2]

हिमालय भारतीय संस्कृति का स्रोत है, जहां ऋषि मुनियों ने आध्यात्मिक समृद्धि, शांति, प्रकाश के लिए हिमाचल को निहारा और अपने तप, साधना, अध्ययन, चिन्तन, मनन से भारत को वह सनातन संस्कृति प्रदान की है जो

---

1 पहाड़ी संस्कृति मंजुषा लेखक एम० आर० ठाकुर लेख – हिमालय संस्कृति में जनजातीय एवं शिक्षा पृ० सं०, 81.

2 पहाड़ी संस्कृति मंजुषा लेखक एम० आर० ठाकुर लेख – हिमालय संस्कृति में जनजातीय एवं शिक्षा पृ० सं०, 82.

हजारों वर्षों के बाद आज भी शब्दशः उपयुक्त ठहरती है। यह संस्कृति अनेकता में एकता का संदेश देती है।[1]

संस्कृति एक व्यापक शब्द है। विद्वानों ने संस्कृत को अपने ढ़ंग से परिभाषित किया है। इसे परम सहज और निगूढ़ भी कहा गया है। अध्येता और ज्ञानी के लिए संस्कृति ईश्वर की तरह कही गई है। जहां एक कोशकार ने 'संस्कृति' को 'संस्कार' कहा है। वहां संस्कृति को अंग्रेजी में 'कल्चर' का पर्याय माना है। लेटिन इंगलिश डिक्शनरी में 'कल्चर' की उत्पत्ति 'कैल्टस' से मानी जाती है। दूसरा आशय कृषि करना या खेत जोतना है।

'श्री एमालर' और **'श्री मैकमिलन'** ने भी संस्कृति के इस रूप को स्वीकारा है। **'श्री हिवटनी'** ने 'कल्चर' को अति सुन्दर ढ़ंग से परिभाषित किया है। उन्होंने संस्कृति को संस्कार, सुधार, परिष्कार शुद्धि सजावट और सभ्यता कहा है।

'भारतीय विद्वानों के अनुसार' – **'श्री आप्टे'** ने संस्कृति की व्याख्या करते हुए इसे परिपूर्ण बनाना, भोज्य बनाना, कपड़ा पहनना, व्याकरार्णक शुद्धि कारक संस्कार, जेवर पहनना, पवित्र करना, चित्त या शरीर की शाकी, सामर्थ्यक कार्य का प्रभाव और कार्य की श्रेणी कहा है और साथ ही उन्होंने संस्कृति को गुण, विचार गर्भाधान, सीमानोत्रयन, जातकर्म, नामकर्म, चूड़ाकर्म उपनयन, विवाह संग्रह की प्रवृति, सामान्य शिष्टाचार और प्रेतकर्म सम्बन्धी शिष्टाचार संस्कार भी कहा गया है।

'चन्द्रकोशानुसार' संस्कृति को समृति का कारण, आत्मा का गुण, शास्त्र का ज्ञान, शब्दों का साधन और विवाह आदि दसधर्म कहा गया है।

---

[1] पहाड़ी संस्कृति मंजुषा लेखक एम० आर० ठाकुर लेख – हिमालय संस्कृति में जनजातीय एवं शिक्षा, पृ० सं०, 83.

'संस्कृति कोशानुसार' इसे संस्कार ही कहा गया है। कोशाकार ने इसे पात्र शुद्धि किये जाने वाले कर्म और सोलह संस्कार कहा है।[1]

'अन्य कोशानुसार' संस्कृति को अनुभव, कर्म और गुण विशेष कहा गया है।

'मानक हिन्दी कोशानुसार' संस्कृति की व्याख्या इस प्रकार की गई है–'संस्कार पुंसवेष्ट प्रशिणाय क्षणदिशु कुत्तुमा उक्तेः पुरूषस्चैवधर्म न्यायमतम्'

हिन्दी साहित्यकोश का व्याख्याकार संस्कृति समाज से सीखे हुए व्यवहार का नाम है, जो हमें सामाजिक परम्परा से प्राप्त होता है।

मानक शब्द कोशानुसार संस्कृति को ठीक ही लोगों के आन्तरिक तथा मानसिक उन्नति की परिचयात्मक कला कहा है।

संस्कृति पर पाश्चात्य विद्वानों ने भी शोध किया है। श्री बेव्रटर्स की संस्कृति की परिभाषा अधिक सुस्पष्ट और पूर्ण वैज्ञानिक है। इनकी परिभाषा में सर्वाधिक उत्तम अंश और नैतिक विकास के तथ्य हैं। वास्तव में संस्कृति इन भौतिक उपलब्धियों की उपयोग की कला है। पौशाक पहनने और भोजन करने में जो कला है, यही संस्कृति है।

यूरोप के विद्वान श्री विलियम ब्राइड के अनुसार संस्कृति सही ढंग के सुन्दर विचार हैं। मानवता को सुसंस्कृत बनाने का सोपान है। यह विचारों, आदतों और दृष्टिकोणों का आदान–प्रदान है तथा नवीन तथ्यों को उजागर करता है। संस्कृति, संस्कृति में ही व्यक्त और अभिव्यक्त है। इसे किसी भी सीमारेखा में बांधना उचित नहीं। यह सही में अपने आप में मूर्त और अमूर्त रूप में व्याप्त है।

संस्कृति उसी कौम की और राष्ट्र की महान् कही जाती है जो अधिकांश जातियों की संस्कृतियों को आत्मसात् कर आपस में समन्वय पैदा कर

---

[1] लोकवार्ता शोध पत्रिका (जुलाई से सितम्बर 2004) सम्पादक डॉ० अर्जुन दास केसरी पृ० सं०, 1 से 8.

सकती है। हमारी भारतीय संस्कृति इस दृष्टि से संसार में सब से महान् है। यहां भवन, भक, हूँण मंगोल, खस, कम्बोज, एकासन, दरदकोल, किरात जो भी आये हमारी सामाजिक संस्कृति के उदर में समाहित है तो भी भारतीय संस्कृति की अपनी एक अलग पहचान है और यह पहचान ही हमारी भारतीय संस्कृति है।[1]

हिमाचल की लोक संस्कृति की व्याख्या :

प्रत्येक लोक या फोक का अपना एक विशेष लोकाचार या रहन–सहन होता है, विशेष लोकानुरंजन और लोक संस्कृति होती है और लोक साहित्य इसी का दर्पण होता है। हिमाचली संस्कृति को देव संस्कृति कहलाने का विशेष गौरव प्राप्त है।[2]

लोक संस्कृति से हमारा अभिप्राय जन–साधारण की उस संस्कृति से है जो अपनी प्रेरणा लोक से प्राप्त करती है। डॉ० बलदेव शर्मा उपाध्याय ऋगवेद और अर्थववेद दोनों को शिष्ट संस्कृति और लोक–संस्कृति का परिचायक मानते हैं। अर्थववेद के विचारों का धरातल सामान्य जन–जीवन है तो ऋगवेद का विशिष्ट जन–जीवन। लोक संस्कृति शिष्ट संस्कृति के साथ जन–जीवन में प्रवाहित होती है और उसकी सहायक होती है।

हिमाचल प्रदेश में इन दोनों धाराओं का प्रवाह अनवरत अनादिकाल से चला आ रहा है। आर्य और अनार्य दोनों प्रकार की संस्कृतियों का सांमजस्य यहां उपलब्ध है। शिष्ट संस्कृति के रूप में वैदिक, पौराणिक विधि–विधान संस्कार यहां प्रचलित हैं। देव भूमि कहलाने वाले इस प्रदेश में धार्मिक देवस्थानों से सम्बन्धित वैदिक, पौराणिक कर्मकाण्ड़ एवं प्राचीन देवालय उसका प्रमाण हैं तो दूसरी तरफ जन–जीवन से सम्बन्धित आचार–विचार, विश्वास, परम्पराएं, व्रत, पर्व,

---

1 लोकवार्ता शोध पत्रिका (जुलाई से सितम्बर 2004) सम्पादक डॉ० अर्जुन दास केसरी पृ० सं०,1 से 8.

2 हिमाचल प्रदेश का लोकसंगीत सचिव श्री जगदीश शर्मा (हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी) पृ० सं०, 4.

प्रथाएं जादू–टोना, शगुन अपशगुन, त्यौहार, रीति–रिवाज़, गीत–गाथाएं, लोक नृत्य, लोकवाद्य आदि लोक संस्कृति के अन्तर्गत प्रचलित हैं। जो लोग लोक साहित्य को साहित्य नहीं मानते या गवांरू साहित्य कह कर पुकारते हैं वे लोक–जीवन के स्त्रोतों से कोसों दूर है। भाई की खातिर जान देने वाला मोहणा, एक गीतकार के कंठ से उतरा नहीं की बच्चे, बूढ़े, जवान सभी की जुबान पर चढ़ गया। चम्बा की भागदेई, रूपणु, पुहाल, निरमण्ड़ा री बाह्मणी, नूरपुर की खतरेटी, कुल्लु की लाड़ी शांवली, भावारूप, सती चैरवी, खूनी परसरामा आदि सैंकड़ों गाथा गीत किसी ने लिपिबद्ध नहीं किये अपितु दिल से निकली आवाज़ है। वस्तुतः यह हिमाचल की लोक संस्कृति एवं जन–जीवन को स्पर्षित करती है।[1]

हिमाचल की लोक संस्कृति व जीवन को मुख्य रूप से तीन श्रेणियों में बांटा हुआ माना जाता है।

1. *लोक विश्वास तथा परम्पराएं*
2. *रीति–रिवाज़ तथा प्रथाएं*
3. *लोक साहित्य*

लोक विश्वास तथा परम्पराएं :

प्रथम श्रेणी के अन्तर्गत यहां की भौगौलिक स्थिति रहन–सहन, पशु–पक्षी, शगुन–अपशगुन, जादू–टोना इत्यादि आते हैं। कुल्लु, कांगड़ा, महासु, चम्बा आदि क्षेत्रों ऐसी मान्यताएं प्रचलित हैं। नाथ सम्प्रदाय, गुरू गोरखनाथ, बाबा दयोठ सिद्ध, बाबा जी का थड़ा, चरण पादुका पूजन आदि समस्त हिमाचल में यह धारणा समान रूप से प्रचलित है, जो यहां की जन संस्कृति का प्रत्यक्ष स्वरूप हैं।

रीति–रिवाज़ तथा प्रथाएं :

दूसरी श्रेणी में सामाजिक एवं राजनैतिक जन–जीवन पर आधारित विभिन्न प्रथाएं एवं परम्पराएं रीति रिवाज़, व्रत, त्यौहार, व्यवसाय आदि लिये जाते हैं। कुल्लु का दशहरा मेला, चम्बा का मिन्जर, मण्ड़ी की शिवरात्रि, कांगड़ा, चामुण्डा,

---

1. हिमाचल लोक संस्कृति के स्रोत – डॉ० बंशीराम शर्मा, (कुछ अंश)

ज्वालामुखी, नैनादेवी व चिन्तपूर्णी के भगवती के मन्दिर में नवरात्रे पूजन, सैरी आदि सक्रांति के त्यौहार, विविध संस्कार, जनेऊ संस्कार, विवाह संस्कार और मृत्यु संस्कारों में भी विभिन्न परम्पराएं एवं प्रथाएं प्रचलित हैं, जिनका सम्बन्ध यहां की जन–संस्कृति से सम्बन्धित है। राजनैतिक संस्कृति से सम्बन्धित, गणराज्य दिवस, गणतन्त्र दिवस, हिमाचल दिवस, हिमाचल पूर्ण राजस्व दिवस, हिन्दी दिवस, पहाड़ी दिवस आदि राष्ट्रीय दिवस हिमाचल की लोक संस्कृति के अंग हैं।

लोक साहित्य :

तीसरी श्रेणी में लोक साहित्य जिसके अनतर्गत लोक नृत्य, लोक कथाएं, कहावतें, पहेलियां, लोक गीत आदि लिए जाते हैं तथा इसी के अन्तर्गत लोक गीत आते हैं। लोक साहित्य में लोकगीतों का प्रथम स्थान है। लोकगीत किसी समाज विशेष की लोकसंस्कृति के गवाक्ष होते हैं। इन्हीं के द्वारा लोकसंस्कृति अपनी विशिष्टताएं अभिव्यक्त करती हैं।

जिनमें संस्कार गीत, प्रेम गीत, विरह गीत, श्रम गीत, करूण गीत आदि पारम्परिक रचनाएं चली आ रही हैं, उनके लेखक अज्ञात हैं। हिमाचल की लोक संस्कृति में लोक गीत, लोक गाथा, लोक कथाएं, वीरता और शौर्यता के अक्षम भण्डार भरे हैं। लोकनाट्य और लोकनृत्य यहां के जन समुदाय के जीवन का एक अविभाज्य अंग बना हुआ है। कुल्लु, महासू, किन्नौर, लाहौल – स्पिति की विभिन्न प्रकार की नाटियां, सिरमौर का छोहरा नृत्य, कांगड़ा का झमाखड़ा नृत्य, बिलासपुर और सोलन का गिद्धा, मण्डी की लुड्डी नृत्य आदि अपने–अपने पारम्परिक आंचलिक नृत्य हृदय की धड़कन और पांव की थिरकन लिये जन समुदाय में संजोए हुए हैं। एक प्रदेश के इन विभिन्न प्रकार के लोक नृत्यों में भिन्न–भिन्न भाषाओं के लोकगीतों में विविध रूप में प्रचलित हैं। इसके इलावा ढ़ोलरू, गुग्गा छंतरी, चन्द्रौली, करयाला, भगत, बांठड़ा, स्वांग लोकनाट्य तथा प्रहसन प्रचलित है, जिनमें हिमाचल की लोकसंस्कृति जीवन्त बनी है।

प्रदेश के खान पान में अति गर्म और अति सर्द क्षेत्र होने के कारण बहुत भिन्नता है। वैसे ही पहनावे की संस्कृति में भी पूरे भारत के मुकाबले हिमाचल की वेशभूषा अभिन्न तथा आकर्षक हैं।[1]

शिव स्वरूप नागाधिराज हिमालय, हिमाचल में देवात्माएं हैं। शैव और शाक्त लोगों का प्रदेश है। हिमाचल ही शंकर है और उसमें व्याप्त लोक संस्कृति ही पार्वती है। पर्वतमालाओं में प्रस्तुत देवांगनाओं की क्रीड़ा भूमि, किन्नरों गंधर्वों की रसवन्ती स्थली जनसमुदाय की संस्कृति है। इसी कारण हिमाचल को 'देवभूमि' कहा जाता है। इन सभी श्रेणियों का समाहित रूप ही हिमाचल की लोक संस्कृति और जनजीवन है।[2]

'गीत' :

'गीत' शब्द की व्याख्या हम कुछ इस प्रकार से भी कर सकते हैं मानों एक कविता लिखित रूप में है जिसमें शब्द तो हैं लेकिन निर्जीव सी है। उसे कोई व्यक्ति पढ़ेगा, कोई नहीं पढ़ेगा क्योंकि उसमें रस की कमी है अर्थात् बिना स्वरों के रचना नीरस है, लेकिन यदि कोई गायक उसी कविता को स्वरों में ढालता है तो वही निर्जीव लग रही कविता सजीव होकर स्वरों के पंख लगाकर संगीत के उनमुक्त गगन में विचरण करने लगती है मानों एक सुन्दर सी मछली अथाह गहरे समुद्र में जाकर और फिर बाहर आकर लोगों को रिझा रही है। स्वरों और शब्दों का पारस्परिक मेल जिसमें गायक अपने मधुर कंठ से माधुर्य भरता है वही 'गीत' है।[3]

कोई ही ऐसा व्यक्ति होगा जिसे गीत या गीत के स्वर आकर्षित या प्रभावित न कर पाते हों, फिर चाहे वा शास्त्रीय संगीत ज्ञाता हो या नहीं, फिर भी कोई न कोई गीत ऐसा होता है जिसे वह गाएगा और गुनगुनाएगा। गीत कई

---

1 हिमाचल प्रदेश का लोकसंगीत सचिव श्री जगदीश शर्मा (हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी)

2 सोमसी लेखक – डॉ० डी० शर्मा (हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी)

3 हिमाचल लोकगीतों में राग छाया (एक अध्ययन) कल्पना शर्मा पृ० सं०, 62.

प्रकार के होते हैं जैसे– लक्षण गीत, फिल्मी गीत, लोकगीत। आजकल लोग ज्यादातर फिल्मी गीत सुनना अधिक पसन्द करते हैं, जिसके कारण वह अपनी लोक संस्कृति से दूर होते जा रहे हैं, लेकिन यदि ध्यान से देखा जाए तो लोकगीत ही हमारी संस्कृति के आईने हैं जिसमें हमारे जनजीवन, संस्कृति की साफ झलक मिलती है।[1]

गीत एक स्वरमयी रचना है, जिसका प्रभाव मानव जीवन पर ही नहीं, अपितु पेड़ पौधों व वन्य जीवों पर भी अपना विशेष प्रभाव डालता है। प्रत्येक प्राणी की एक स्वभाविक इच्छा होती है कि वह अपने आन्तरिक भावों को दूसरों के समक्ष प्रकट करें। इसके लिए वह वाणी का प्रयोग करता है। अपनी कविता को स्वर प्रदान कर सुन्दर संगीत के साथ प्रस्तुत करता है।

लोकगीत

हिमाचल प्रदेश की उज्जवल संस्कृति के प्रत्येक तत्व को प्रतिबिम्बित करने में यहॉ के लोकगीतों का प्रमुख महत्व रहा है।[2] हिमाचल प्रदेश में दो, तीन, चार स्वरों में गाए जाने वाले अनेक लोकगीत इस बात को प्रमाणित करते हैं कि वे अतिप्राचीन लोकपरम्परा से चले आ रहे हैं।[3]

यह शब्द लोकगीत जिसे अंग्रेजी में 'फोक सौंग' कहा गया है दो शब्दों के मेल से बना है लोक और गीत। सामान्य अर्थ में हम कह सकते हैं, ऐसे गीत जो किसी की निजी सम्पत्ति नहीं है, और न ही किसी भी कलम द्वारा लिखे गये हैं। आदिम मनुष्यों के हृदय गीत ही लोकगीत हैं जिसमें उनकी हर्षोल्लास, दुःख आदि की कहानी है और पीढ़ी दर पीढ़ी चलते रहने के कारण ये अमर हैं। यही पारम्परिक लोकगीतों के रूप में विद्यामान हैं।[4]

---

1 हिमाचली लोकगीतों में राग छाया (एक अध्ययन) कल्पना शर्मा पृ० सं०, 62.

2 हिमाचल प्रदेश का लोकसंगीत लेख चमन लाल वर्मा (हि० क० सं० भाषा अकादमी) पृ० सं०, 82.

3 वही, पृ० सं०, 17.

4 मण्डयाली लोकगीत और लोक गाथाएं डॉ० कांशीराम आत्रेय पृ० सं०, 35.

'A folk Song is a sponatanious out flow of the life of the People that will in more or less Primitive Conditions outside the sphere of sophisticated influences'.

अर्थात् लोकगीत लोगों के उस जीवन की प्रवाहात्मक अभिव्यक्ति है जो सुसभ्य समाजों से बाहर कम या अधिक रूप में आदिम अवस्था में है।[1]

Its seed lies in community Singing. लोकगीत का मूल जातीय संगीत में है।[2]

चैम्बर्स डिक्शनरी में folk song का अर्थ है:– Any song or balled originating among the People and traditionally handed down by them ऐसा कोई भी गीत जिसका उद्‌गम लोक में हो और जो परम्परागत् रूप से पाश्चाद्‌वर्तियों को मिला हो।[3]

लोकगीतों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :

लोकगीतों के बारे में यह कहा जाए 'गागर में सागर' तो ये उक्ति कदापि गलत नहीं लगेगी। जनमानस का कौन सा ऐसा भाग है जिसका अनुभव हमें लोकगीतों में नहीं होता। जीवन की कोमलता और कठोरता को अपने में समेटे लोकगीत जीवन दर्शन देता है।[4]

लोकगीतों का आर्विभाव कब हुआ यह कहना बहुत ही कठिन है। इसका निश्चयात्मक उत्तर किसी के पास नहीं।[5] कारण यह है कि लोकगीतों की रचना न तो साहित्य के लिए हुई और न ही इतिहास बनाने के लिए, बल्कि लोकगीतों का उद्‌गम मानव समाज के साथ ही आरम्भ हुआ। लोकगीतों के बारे में जब हम दृष्टि डालते हैं तो हमें इसकी प्राचीनता का अनुमान ज्ञात होता है।

---

1 मण्डयाली लोकगीत और लोक गाथाएं डॉ० कांशीराम आत्रेय, पृ० सं०, 35.

2 वही, पृ० सं०, 35.

3 सोमसी–हिमाचल लोकसंगीत में राग छाया लेख – डॉ० गंगाराम शर्मा, पृ० सं०, 84.

4 सोमसी–हिमाचल प्रदेश का लोकसंगीत लेख चमन लाल वर्मा (हि० क० सं० भाषा अकादमी) पृ० सं०, 82.

5 हिमाचल लोकगीतों में राग छाया (एक अध्ययन) कल्पना शर्मा पृ० सं०, 63.

ऐसा कहा जा सकता है कि 'जबसे पृथ्वी पर मनुष्य है तब से गीत है, और जब तक मनुष्य इस धरती पर रहेगा तब तक ये गीत भी रहेंगे।

मानव जीवन की तरह गीतों का भी जन्म–मरण चलता रहता है। आधुनिकता के इस दौर में भी लोकगीत अपना असली स्वरूप लिए हुए स्थिर हैं। लेकिन कुछ गीत ऐसे हैं जो देशकाल के अनुसार भाषा का चोला तो बदल डाला, लेकिन थोड़े हेर–फेर से समाज में अपना आस्तित्व बनाए हुए हैं और बहुत से गीतों की आयु तो हजारों वर्ष होगी।'

भारतवर्ष में लोकगीतों की परम्परा इतनी पुरानी है कि यह गीत श्रृंखला हमें वैदिक युग तक ले जाते हैं। हिन्दु परम्परा के अनुसार जन्म से मृत्यु तक संस्कार हैं जिसमें गीत गाने का उल्लेख मिलता है।

कई विद्वानों ने लोकगीतों की व्याख्या अलग–अलग तरह से की है। 'ऐसे गीत जो खुले आकाश के नीचे, खुली धरती पर एक छोर से दूसरे छोर तक अंकुरित हुए हैं, धरती ही इन गीतों की मां है, जिसकी गोद में खेलकर यह हृष्ट–पुष्ट हुए हैं। ये कहीं से उधार नहीं लिए जाते, न ही किसी बहाव में बहकर आते हैं किसी व्यक्ति विशेष ने भजन की तरह इसका निर्माण नहीं किया, जिसे सभी ने सुना, गाया और पूरे भाव के साथ इन्हें सौंप दिया। वही व्यक्त किये गये भाव कालान्तर में गीत बन गये।'[1]

अतः यह पूर्णतयः स्पष्ट हो गया कि लोकगीत किसी की निजि सम्पत्ति या जागीर नहीं है यह पारम्परिक संस्कृति की धरोहर है जिसे संजोकर रखा गया है। यह लोकगीत धरती के कण–कण में विद्यमान है, जिन्हें खत्म करना आसान ही नहीं बल्कि असम्भव भी है। लोकगीतों को हमने अपने पूर्वजों से ग्रहण किया, अपने आप में समेटा ओर अपनी आने वाली पीढ़ियों को इसे एक अमूल्य

202494

। हिमाचल लोकगीतों में राग छाया (एक अध्ययन) कल्पना शर्मा पृ० सं०, 65.

निधि के रूप में सौंप देंगे। इस प्रकार बिना रूके यह सिलसिला एक धारा प्रवाह की तरह चिरकालीन तक चलता रहेगा।[1]

हिमाचल जनजीवन में लोकगीतों का महत्व :

जो स्थान जो रूतबा मनुष्य जीवन में सांस को प्राप्त है वही स्थान हमारी संस्कृति में लोकगीत को प्राप्त है। लोकगीत हमारे जीवन में विशेष स्थान ग्रहण किये हुए हैं। हमारे जीवन का दर्पण हमारी संस्कृति है और लोकगीत संस्कृति के प्राण हैं। हमारे जीवन के प्रत्येक पहलू को लोकगीतों में देखा जा सकता है। लोकगीत हमें विरासत में मिले हैं, जो हमें हमारे पूर्वजों की देन हैं। यह एक परम्परा है जो लोकगीत हमें हमारे पूर्वजों से सुनने को मिले हम उसी परम्परा के अनुसार उसे आगे आने वाली पीढ़ी को सौंप देंगे। इस तरह यह सिलसिला चलता रहेगा। लेकिन आधुनिक काल में फिल्मी संगीत का अत्याधिक प्रभाव होने के कारण लोकगीतों का स्वरूप भी बदलता हुआ नज़र आ रहा है। उन्हें वह स्थान नहीं मिल पा रहा है जो वास्तविकता में लोकगीतों का है।[2] किसी भी प्रकार का संगीत चाहे वह 'शास्त्रीय संगीत' हो या 'फिल्मी संगीत' सभी का उद्‌गम स्त्रोत लोकगीत ही है। लोकगीतों से ही आगे चलकर शास्त्रीय संगीत का विकास हुआ है। इस प्रकार किसी भी दृष्टि से यह संगीत तुच्छ या निम्न श्रेणी का नहीं माना जाना चाहिए।[3]

---

1 सिरमौरी लोक साहित्य डॉ० खुशीराम आत्रेय पृ० सं०, 83.

2 हिमाचली लोकगीतों में राग छाया (एक अध्ययन) कल्पना शर्मा पृ० सं०, 64.

3 वही, पृ० सं०, 67.

हिमाचल प्रदेश के लोकगीतों का वर्गीकरण

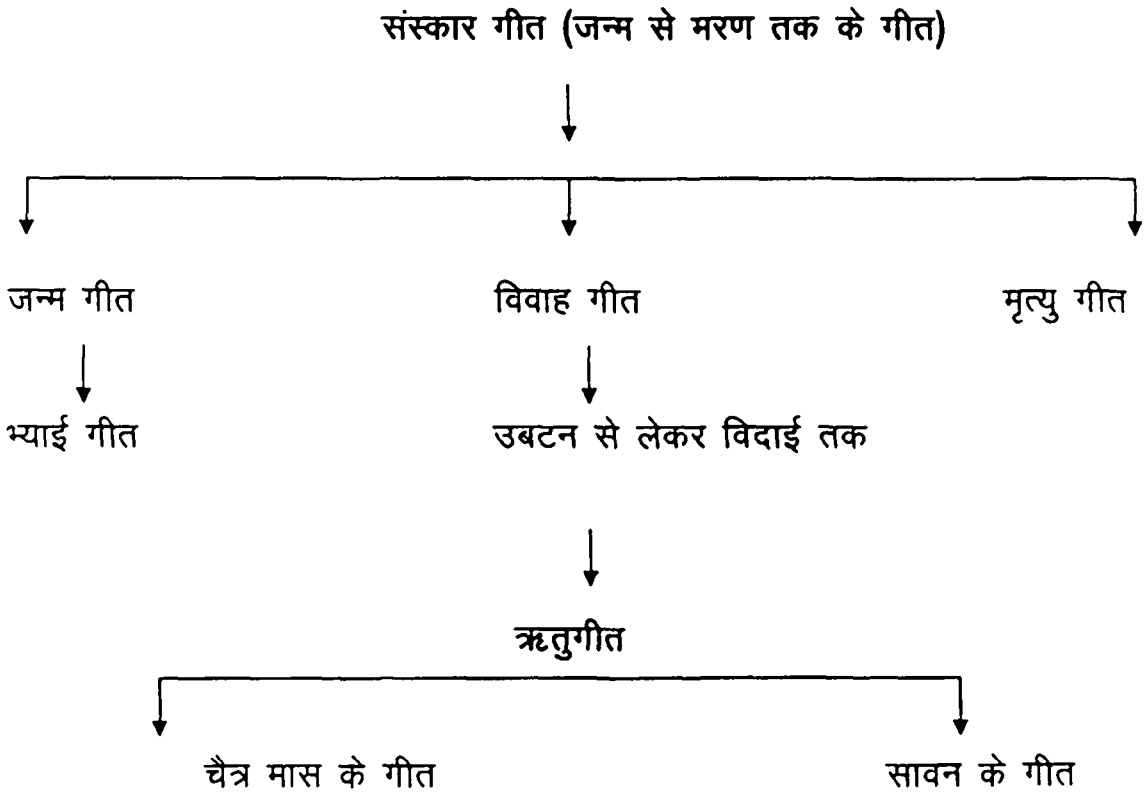

हिमाचल प्रदेश में विशेषतौर पर संस्कार गीत, ऋतु गीत, प्रेम गीत, विरह गीत, त्यौहार गीत इत्यादि गीत प्रचलित हैं। यह गीत अधिकतर स्त्रियों द्वारा गाये जाते हैं। * हिमाचली लोगों ने लोक संगीत को जीवित रखने के लिए और उन्हें जनसाधारण तक पहुंचाने के लिए बहुत प्रयास किया है ताकि उसकी वास्तविकता बनी रहे। गानों की शब्द रचना वही है लेकिन आधुनिकता के इस दौर में आधुनिक तकनीकी यन्त्रों द्वारा अपने लोकगीतों को आधुनिकता को देखते हुए नये तरीके से लोगों के समक्ष कैसेटे व सीडी के द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है, ताकि नई पीढ़ी को अपने लोकसंगीत व लोकगीतों से अवगत् कराया जाये। सरकार द्वारा भी लोक संगीत को प्रिय बनाने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए और सरकार यह कार्य कर भी रही है।

लोक कलाकारों को सम्मानित कर उनका आत्मबल ऊँचा करना चाहिए ताकि वे संस्कृति के प्रमाण स्वरूप लोकगीतों को सम्भलकर, संवारकर उनकी मधुरता से समस्त वातावरण को सुगन्धित बनाते रहें ताकि आने वाली पीढ़ियां भी इन्हें ग्रहण करके लाभान्वित हो सकें।[1]

हिमाचली लोक संगीत में संस्कार गीत, (जन्म से मृत्यु) तक विरह गीत, प्रेमगीत, विवाह आदि गीत, देवी–देवताओं पर आधारित गीत, लोक गीत, दिनभर की क्रियाएं आदि जीवन की कोमलता और कठोरता को अपने में समेटे हुए जीवन दर्शन देता है और कोमलता से स्पर्श करके उसका अनुभव समूचे जनमानस को करवाते हैं।[2]

संगीत की व्याख्या :

'संगीत एक प्रदर्शनात्मक कला है। इसका मुख्य उद्देश्य भावों की अभिव्यक्ति है जिसे गायक गाकर, नर्तक नाचकर और वादक बजाकर सहजरूप में सम्प्रेषित कर लेता है।' तीनों कलाओं का मेल ही संगीत है।[3]

संगीत शब्द की व्याख्या करने से भी 'स' का अर्थ हुआ उत्तम तथा 'गीत' का अर्थ हुआ गायन अर्थात् उत्तम गायन को संगीत कहेंगे।

संगीत एक उत्कृष्ट ललित कला है, जिसका मुख्य आधार नाद अथवा आवाज़ है। इसी कारण 'नाद ब्रह्म' कहकर इस कला को पुकारा गया है।[4]

अंग्रेज विद्वान रस्किन के अनुसार – 'अन्तरात्मा का उत्थान तथा उसे कलात्मक आनन्दमय स्वरूप प्रदान करना ही संगीत का मुख्य ध्येय होना चाहिए।'

स्वर्गीय रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार –'संगीत' सौंदय का साकार एवं सजीव प्रदर्शन माना है।

---

1 हिमाचली लोकगीतों में राग छाया (एक अध्ययन) कल्पना शर्मा पृ० सं०, 67.

2 वही, पृ० सं०, 226.

3 हिमाचल प्रदेश का लोक संगीत लेख के० एल० सहगल पृ० सं०, 139.

4 संगीत शास्त्र दर्पण लेखिका –श्रीमती शांति गोवर्धन पृ० सं०, (भाग 1)

भारतवर्ष में संगीत की दो पद्धतियां प्रचलित हैं उत्तरी व दक्षिणी संगीत पद्धति।[1]

संगीत दो प्रकार का होता है। 1. मार्गी संगीत 2. देशी संगीत। मार्गी संगीत से अभिप्राय उस संगीत से है जिसका प्रयोग देवता अथवा गंर्धव लोग करते हैं जिसका उद्देश्य मोक्ष प्राप्ति है। इसे गंर्धव संगीत भी कहते हैं लेकिन इसका प्रचार आजकल नहीं है।

'देशी संगीत' उसे कहते हैं जो अनेक देशों में जनता की अभिरूचि पर निर्भर रहता है तथा उसका मुख्य उद्देश्य जनता का मनोरंजन करना है। देशी संगीत को गान कहकर भी पुकारा जाता है। इसी के अन्तर्गत निबद्ध व अनिबद्ध गान आते हैं।

तालबद्ध रचना निबद्ध गान और ताल रहित रचना अनिबद्धगान कहलाती है। इसी के अन्तर्गत लोक संगीत आता है।[2]

लोक संगीत की व्याख्या – लोकसंगीत दो शब्दों का समुच्चय है लोक + संगीत। लोक शब्द संस्कृत में लोकद नि धातु में 'धञ' प्रत्यय लगने पर निष्पन हुआ। 'जिसका अर्थ है देखने वाला।'[3]

लोक संगीत की परिभाषा – 'लोक संगीत का अभिप्राय ग्राम्य संगीत से समझते हैं। वस्तुतः लोक संगीत उसी को कहा जा सकता है जिसका स्वरूप लोकरंजनकारी हो।'[4]

---

1 संगीत शास्त्र दर्पण लेखिका – श्रीमती शांति गोवर्धन पृ० सं०, 10 (भाग 1).

2 वही, पृ० सं०, 53 (भाग 1).

3 लोकमानस के सुरीले स्वर डॉ० मनोरमा शर्मा पृ० सं०, 9.

4 सोमसी लेख प्रो० भीमसेन शर्मा (हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी) पृ० सं०, 12.

'According to encyclopedia Britannica – Typically folk music lives in oral Tradition. It is learned through hearing rather than reading '.[1]

हिमाचल का लोक संगीत :

हिमाचल प्रदेश अपनी अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर के कारण शेष भारत के लिए विशेष आकर्षण का केन्द्र रहा है। हिमाचल का लोक संगीत अत्यन्त समृद्ध है और यह पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ता रहता हैं अगली पीढ़ी अपनी प्रतिभा से इस अमूल्य सम्पदा को अधिक अभिवृद्ध तथा समृद्ध करती है। इस प्रकार यह परम्परा मौखिक रूप में हस्तांतरित होती रहती है। इन सभी विधाओं का संग्रह एवं प्रकाशन जरूरी है।

हिमाचली लोक संगीत की निजी विशेषताएं हैं। यह प्रदेश अपने गर्भ में मौखिक साहित्य के अमूल्य रत्न छिपाए हुए है। यहां का लोक संगीत भी पहाड़ी घाटियों सा गम्भीर, व्यापक, पर्वतीय वायु सा स्वछन्द और नदी नालों सा थिरकन भरा एवं चंचल व सरल है।[2]

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने लोकगीतों को ग्रामीण जनता की फुलवारी कहा है। लोक संगीत चाहे किसी भी क्षेत्र का हो कर्णप्रिय एवं मधुर होता है। लेकिन हिमाचली लोक संगीत में इतनी मिठास और कशिश है कि कोई भी संगीत प्रेमी उस पर मोहित हुए बिना नहीं रह सकता। हिमाचल में असंख्य लोक कलाकार हैं जिन्होंने लोक संगीत को उजागर करने में अपना समस्त जीवन अर्पित किया है ताकि प्रत्येक व्यक्ति अपनी हिमाचली संस्कृति को लोक–संगीत के माध्यम से भी पहचाने क्योंकि संगीत ही मानव जीवन में नई चेतना का संचार कर सकता है।[3]

लोक संगीत ही पीछे छोड़कर गीतों को मधुर कंठ से छंदोबद्ध करता है और वे ही लोकगीत कहलाते हैं।

---

1 According to encyclopedia Britannica-William Benton Publisher P.N. 466.

2 लोकमानस के सुरीले स्वर डॉ० मनोरमा शर्मा पृ० सं०, 9

3 हिमाचली लोकगीतों में रागछाया (एक अध्ययन) कल्पना शर्मा पृ० सं०, 70

'लोक संगीत के माध्यम से विश्व में मानवता, आत्मीयता और ऐक्य की स्थापना की जा सकती है।[1] यह ईश्वर प्राप्ति का सुगम साधन है, उसकी पहुंच आत्मा तक है।' इसकी सच्ची झलक मानव जीवन में निहित होती है तथा भारतीय संस्कृति तथा हमारे परम्परागत् जीवन का सच्चा व सुन्दर इतिहास गूंथा हुआ होता है।[2]

यह कहना गलत नहीं होगा कि लोकगीत व लोक संगीत हिमाचली जीवन में ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व में जन साधारण के हृदय में व धरती के कण–कण में बसा हुआ है। यह अमूल्य निधि के रूप में हमें प्राप्त हुआ है।[3]

---

1 हिमाचली लोकगीतों में रागछाया (एक अध्ययन) कल्पना शर्मा

2 लोक संगीत अंक लेख पं० ओमकार नाथ ठाकुर के शब्द जनवरी 1966 पृ० सं०, 2.

3 लोक संगीत अंक लेख रूकमणी देवी के शब्द जनवरी 1966 पृ० सं०, .2.